International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
www.newresearchjournal.com/academic
Volume 1; Issue 2; February 2016; Page No. 21-24

बोड़ो लोकगीत में प्रकृति चित्रण का अनुशीलन (असम प्रांत के विशेष सन्दर्भ में)

जयन्त कुमार बोरो

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कोकराझार गवरनमेन्ट कॉलेज, कोकराझार, असम

शोध आलेख सार

आज पूर्वोत्तर भारत की भाषा एवं बोलियों के लिए नये पूणर्जागरण की आवश्यकता है। पूर्वोत्तर भारत के प्रान्तीय और क्षेत्रिय विशेष की भाषा एवं बोलियों पर संकट के बादल छाया हुआ है। अगर ऐसा ही रहा तो इनको एक दिन मृत भाषा की संज्ञा से अभिहित किया जाएगा। कोई भी भाषा मरती तो नहीं है लेकिन उसका प्रचलन रुक जाता है। अंत में जिसे मृत भाषा की संज्ञा या नाम दे दिया जाता है। पूर्वोत्तर भारत के लोक साहित्य जिनका स्वरुप काफी पौराणिक एवं मनोहारी है, उन सबको मृत साहित्य की संज्ञा ने मिले इस हेतु उन्हें ज्यौं का त्यौं बनाये रखने की आवश्यकता है। प्रत्येक सामज का अपना एक साहित्य एवं भाष है। असम प्रांत का बोड़ो जनजाति असमीया संस्कृति के निर्वाह में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को स्थापित करता है। बोड़ो जनजातियों ने अपने लोकगीत में प्रकृति के विविध उपादानों को अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया है। इस समाज की मौखिक साहित्य के रुप में लोक गीत का विशेष महत्व है।

मूल शब्दरः पूणर्जागरण, मृत भाषा, प्रकृति, भावना, अभिव्यक्ति आदि।

प्रस्तावना

लोक शब्द अपनी प्राकृतिक विशेषताओं को साथ लिये चलती है। यहाँ लोक का अभिप्राय उन लोगों से है जो नगरीय सभ्यता के दूर अपने प्राकृतिक रुप में बन्धे जाते है। जिनका जीवन पारम्परिक नियमों से चलता है। आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाले तथाकथित अशिक्षित होते है। जिनका आचार-विचार एवं जीवन परम्परायुक्त नियमों से नियन्त्रित होता है। इससे तो यह बात स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुये अपनी पुरातन स्थिति में बने हुये भी अपने वर्तमान को जी रहे है। उन्हें ही लोक की सज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। सही मायने में हम यदि यह जानने का प्रयास करे तो यह स्पष्ट हो चलता है कि लोक का सीधा-सीधा सम्बन्ध समुची जनता से तो है, परन्तु विशेष कर उन लोगों से अधिक है जो अपने दैनिक जीवन को पारम्परिक नियमों को प्रकृति के गोद में पाते है और जो प्रकृति के गोद में रहकर ही अपने जीवन का विकास सम्भव पाते है।

बोड़ो जनजाति, समाज एवं संस्कृति की अपनी विशेषतायें है। पहनावा से लेकरके अपनी पारम्परिक नियमों के खान-पान आदि क्षेत्रों में अपनी प्राकृतिक विशेषताओं को धारण किये हुये है। विवाह हो या अन्य उत्सव धर्म के विधि विधानों तक प्रकृति को अपना अभिन्न अंग मानता है। आज के इस वैज्ञानिक युग के विकास में परम्पराओं में काफी बदलाव आ चुका है। परम्परा एक प्रगतिशील मूल्य है जो हमेशा हमारे जीवन को क्रियाशील और सक्रिय बनाये रखने का प्रयास करती है। परम्परा हमेशा पारम्परिक मूल्यों के साथ-साथ नवीन मूल्यों को भी अपने हृदय में स्थान देती है, जिससे हमारी सभ्यता और संस्कृति का विकास हो सके। परम्परा हमें बहने या भटकने नहीं देती, परन्तु रुढ़ियों को भी परम्परा मान बैठते है। रुढ़ियाँ इतनी चतुर है कि परम्परा में चुपके से घुसे चली आती है और अपना स्थान बना लेती है, जिन्हें हम कालान्तर में अपनी परम्पराओं का ही एक अभिन्न अंग मान कर चलने लगते है।

उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख में बोड़ो लोकगीत में अभिव्यक्त प्रकृति चित्रण को वर्णन करने का प्रयास किया गया है। प्रकृति मानव जीवन का एक अभिन्न अंग है। प्रत्येक समाज के प्रकृति का अपना विशिष्ट स्थान है। बोड़ो सामज के विविध पर्व जैसे- बैंसागु, खेराई उत्सव, आदि में प्रकृति की ही उपासना किया करते है। प्राचीन काल से ही बोड़ो सामज में अपने कुल देवता 'बाथौ' की अराधना के लिए प्रकृति को ही उपयोग में लाते रहे हैं। बोड़ो लोकगीत में किन-किन रुपों में प्रकृति को प्रयोग में लाया गया है उसी का अध्ययन करना प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य है, और साथ ही हिन्दीतर साहित्य को हिन्दी में प्रस्तुत कर इसके प्रति आकर्षित करना हैं।

शोध विधि

प्रस्तुत आलेख की शोध सामाग्री विविध प्रकार के लेखों और साहित्य के सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त किया गया गया है। लोक साहित्य से सम्बन्धित ग्रन्थों में से आलेख को पुरा करने के लिए काफी मदद मिली हैं।

शोध सामाग्री

प्रस्तुत लेख की विषय वस्तु के अध्ययन के लिए विशलेषणात्मक पद्धति को अपनाया गया है तथा यह विषय समीक्षात्मकता पद्धति की भी मांग रखता है।

असम प्रान्त की बिहुँ सम्बन्धी मान्यताये

असम के लोक उत्सव में वर्ष भर में तीन प्रमुख है, जिस उत्सव को बिहुँ के नाम से जाना जाता है। जिसके नाम क्रमानुसार इस प्रकार है- 'बहाग बिहु' (Bahag Bihu), 'काति बिहुँ' (Kati Bihu), 'माघ बिहुँ' (Magh Bihu) आदि। 'बहाग बिहुँ' को ही असमीया में 'रंगाली बिहुँ' और बोड़ो में 'बैसागु' के नाम से जाना जाता है। असमीया समाज और संस्कृति में इन बिहुँ उत्सवों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ये सारे उत्सव ऋतुओं, कृषि जीवन और सामाजिक जीवन से सम्बन्धित है। इन उत्सवों की यही मान्यता के सम्बन्ध में यह कहाँ गया है कि – Festivals marking various agricultural operations almost are invariably marked by ceremonies involving sexual intercourse [1]. 'बहाग बिहुँ' या 'रंगाली बिहुँ' (असमीया) तथा 'बैसागु' (बोड़ो) असमीया समाज की एक महत्वपूर्ण ऋतु कालीन उत्सव है। यह उत्सव कृषि कार्य

से पूर्व वसन्त ऋतु में मनाया जाता है यानि भारतीय पंचाग के अनुसार यह वर्ष के प्रथम माह 'बैसाग' के प्रथम दिन में इसे मनाया जाता है। भारत के प्रायः सभी उत्सव प्रकृति और ऋतु से ही सम्बन्धित है। इसलिए प्रकृति हमारे सामाजिक, धार्मिक जीवन का एक अभिन्न अंग हैं। बोड़ो समाज में बैसागु को वसन्त ऋतु के आगमन के साथ मानये जाने की परम्परा है। 'बैसागु' की मान्यता के समबन्ध में यह धारणा है कि "Baicagu is the greatest festivals of Bodos. This is a seasonal as well as an agricultural festival like the Bihu. Baicagu is a spring festival or the festival celebrated to usher in the New Year" [2].

अगर कालक्रमानुसार बिहुँ पर विचार करे तो दूसरा बिहुँ उत्सव में 'काति बिहुँ' का नाम आता है। यह उत्सव पारम्परिक रुप से कार्तिक मास के प्रथम दिन में मनाया जाता हैं। 'काति बिहु' विशेषकर खेतों में फसल के कताई से पूर्व माया जाता है जिस समय बोये गये फसलो-अनाजों में दाने आने शुरु हो जाते है तथा किसानों के मेहनत का रंग दिखना प्रारम्भ हो जाता हैं। इस उत्सव के दौरान प्रत्येक कृषक और आम लोग अपने-अपने खोतों-खलिहानों में जाकर दीप प्रज्वलित कर लक्ष्मी देवी की उपासना करते है ताकि उनके द्वारा बोये गये फसलों की ठीक-ठीक वृद्धि हो, और आनाजों-धानों के दानो से उनके भन्डार साल भर समृद्ध रहें।

कालक्रमानुसार वर्ष के अन्तिम महीना 'माघ' के प्रारम्भ के समय में 'माघ बिहुँ' के उत्सव का आयोजन किया जाता हैं। यानि की फसलों के काताई और अनाजों को भन्डारों में सुरक्षित रखने के पश्चात् मनाया जाने वाला पर्व हैं। यह उत्सव भोग, तृप्ति और आनन्द के दृष्टिकोण से मनाया जाता है। इसलिए इस उत्सव को 'भोगाली बिहुँ' के नाम से भी जाना जाता हैं। विविध जाति-जनजातियों के सारे गावँ, समाज, समुदाय एक साथ मिलकर मकरसंक्राति के पूर्व सामुहिक भोजन करते हैं। और अपने घरों में नये-नये तरह के पकवान जैसे 'पीठा' (चावल से बने पकवान), मद्य, मांस-मछली आदि का भोग कर आनन्द की अनुभूति प्राप्त करते है। इस उत्सव को सभी जाति-जनजाति एक साथ मनाते हैं और प्राचीन काल से यह मान्यता रही है कि जो लोग अभाव ग्रस्त है उन्हें भी इसमें सम्मिलित करते हैं।

बोड़ो लोकगीत में प्रकृति चित्रण

बोड़ो लोकगीतों के सन्दर्भ में प्रकृति चित्रण के तत्व का अपना एक महत्वपूर्ण अंग हैं। बोड़ो जनजातियों के लोकगीतों में प्रकृति का चित्रण सफल रुप से हुआ हैं। इनके लोकगीतों में प्रेम गीत, विवाह गीत, धार्मिक गीत आदि सभी विद्यमान हैं। बोड़ो लोकगीतों के अवलोकन के पश्चात् यह देखते है कि पैड़-पोधों से लेकर के पालतु जानवरों में कुत्ता, गाय, बिल्ली आदि का भी सरल वर्णन हुआ हैं। इनके लोकगीतों में प्रकृति का स्वर आवद्धता हैं। प्रकृति चित्रण के माध्यम से उनके साधारण जीवन-यापन को समझ सकते है। सामाजिक सन्दर्भ में देख सकते है कि बोड़ो समाज में पशुपालन का भी प्रचलन रहा हैं, विशेषकर गाय, बैल, बकड़ी, सुअर, बिल्ली आदि। बोड़ो समाज में भी ग्वाले गायों-बैलों को चराने के लिए सुबह ही घर से लेकर के दूर किसी खाली मैदान में चले जाते है और संध्या समय में सूर्यास्त होते होते सभी पशुओं को इकट्ठा कर घर लौट आते हैं। इन पशुओं को चराते समय और इकट्ठा करते समय ग्वालें विविध प्रकार के गीतों को आपस में गाया करते है। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

बोड़ो मूल भाषा में-

लावखारफोर लावखारफोर मोसौआ होदो हैया हैया
साना हाबबाय सोनाहबा
गावबा गाव मोसौ होख
गलियाव होलां थख थख
गलिनि दरा मोजाडै खाथेनानै फै
मोसा रांखिनि जादों सोफै सोफै। [3]

हिन्दी में अनुदित रुपः-

ओ ग्वालों ओ ग्वालों,
गायों को हाको घर की ओर
जल्दी जल्दी हाको उन्हें।
पश्चिम में सूर्य चला होने अस्त।
करो अलग अलग समुहों में
और हाको उन्हें उनको निश्चित कक्षों में,
सावधानी से करो बन्द दरवाजों को,
बाघिन घुम रही मौके के तलाश में, [4]

इन पंक्तियों में देख सकते है कि बोड़ो जनजाति पशु पालन रुचि है और उनको जंगली जानवरों के खतरों से बचा कर रखने में भी सक्रिय रहते है। इस लोकगीत में उनके सरल जीवन एवं पशु के प्रति लगाव को देखा जा सकता है।

असम प्रान्त में बैसाख का महीना बड़े ही धुम-धाम से मनाया जाता है। इस महीने से असमीया नववर्ष का प्रारम्भ माना जाता है। यह एक वसन्त कालीन उत्सव है जिसके अन्तर्गत बिहुँ उत्सव को मानया जाता है, जिसका सीधा-सीधा सम्बन्ध कृषि से है। असमीया समाज की मान्यता है कि 'चैत्र मास' के अन्तिम दिन में 'गरु' बिहुँ (अर्थात् पशुओं से सम्बन्धित बिहुँ, विशेषकर गाय) मानाया जाता है तथा बैसाख की पहली तारीख को 'मानुह बिहुँ' (अर्थात् मनुष्य से सम्बन्धित बिहुँ) मनाया जाता है। बोड़ो और असमीया समाज की भी मान्यतानुसार उक्त दिन को गायों को नहलाने के लिए नदी या पोखर में ले जाने की परम्परा है, नदी या पोखर की तरफ जाते हुये लोग दिगलथि नामक एक जगली पेड़ के पत्तों से उन्हें पीता जाता है और धीरे-धीरे करते हुये सभी पशुओं को कुशलता पूर्वक नदी या पोखर के बीचों-बीच ले जाया जाता है ताकि उनको ठीक से नहलाया जा सके। इसके उपरान्त उनको लौकी, बेंगन, और थेकरा नाम एक खट्टा फल आदि से पशुओं का पीटा जाता है। यह पर्व पुरे असम प्रान्त में सभी जाति-जनजातियों के लोगो के मध्य मनाया जाता है। बोड़ो लोकगीत में इसका एक मधुर चित्रण हुआ है-

बोड़ो मूल भाषा में-

दिगलथि लावथि मोसौनि मुलि
दुदालि जागोन गाय खुखिलि
दिगलथि लावथि ख्रि-ख्रि गान्थि
जोंनि मोसौआ जागोन बरल जाति
जानाय नङा गाइदे थेफ्रा
मार्का जागोन फालोनि बेहा। [5]

हिन्दी में अनुदित रुप-

दिगलथि का कोड़ा
गायों के लिए एक बड़ी दवा है
इसकी चोट से गायें
देती दूध अधिक।
जैसे दिघलथि की
लकड़ी में अनेक ग्रंथियाँ
वैसे हमारा बछड़ा भी बड़ा साद बनेगा

और कोई गाय छोटी नहीं होगी,
सभी गायों में उसकी होगी
अलग पहचान। [6]

प्रस्तुत गीत में 'दिघलथि' एक जंगली पेड़ का बोध कराता है। असमीया और बोड़ो समाज की मान्यता है कि यदि बैसाख मास में इसके पत्तीदार तहनी से पशुओं को पीटने से इनके समस्त रोग दूर हो जाते है। सबका मानना है कि दिघलथि के पेड़ की पत्तियाँ पशुओं के लिए औषोधी का काम करती है। इनके जीवन का कितना सरल रुप इस गीत में प्रस्फुतित हुआ है, और तो और पशुओं को भी अपने जीवन में स्थान देते हुये बिहुँ जैसे पारम्परिक त्यौहारों के भी मनाते आ रहे है। दिधलथि के पत्तों के साथ ही साथ लौकी, बेगन आदि सब्जियों के द्वारा भी गायों, बैलों, बकड़ी एवं घर अन्य पालतु पशुओं को पीटा जाता है। लोकी से पीटने का अभिप्राय यह है कि उनके पशुओं की ग्रंथियाँ आकार में बड़े बने और प्रतिवर्ष उनका भरपुर विकास हो तथा ओरों की अपेक्षाकृत अधिक बलशाली एवं विशाल बने। इस प्रकार के सुन्दर गीत का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

बोड़ो मूल भाषा में-

लाव जा फान्थाव जा
बोसोर-बोसोर एर हान्जा हान्जा
बिमानि खिथिर विफानि खिथिर
नोंसोर जागोन हालुवा गेदेर।
बिमा गाइदे बायदि दाजा
फिफा बलर बायदि जा
बारि खनायाव दं एम्बु बंग्ला
बिवायदि जा गेदेर जोग्ला। [7]

हिन्दी में अनुदित रुप-

खाओ तुम लोकी, बैगन तुम खाओ
हो ओ वर्धित प्रतिवर्ष
थे तुम्हारे माँ-बाप लघुतर
किन्तु तुम बनोगी बृहत्तर।
अपनी माँ की भाँति छोटी मत रहो,
उतनी बड़ी और ऊँची होओ जैसे तुम्हारे पिता है
फुलबारी के कोने में
एक बड़ा मेढ़क है
तुम भी बड़ी हो जाओ। [8]

पशुओं के प्रति इस समाज का लगाव अधिक है ऐसा इस गीत के माध्यम से स्पष्ट हो जाता है। वे अपने पशुओं के साथ 'फुलबारी' (फुलों के बगीचा) के कोने में बैठी मेढ़क के प्रति भी प्रेम रखते हुये प्रकृति से यही कामना व्यक्त करती है कि उन सबका आकार लघुतर से बृहत्तर बने।

ग्रीष्म ऋतु में अधिक वर्षा होने पर गरीब परिवारों को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। एक गीत में यह देखा गया है कि गरीब परिवार वर्षा से यह प्रार्थना करता है कि मत बरसना, क्योकि हमारी झोपड़ी विपदग्रस्तर है और सूर्य से प्रार्थना करते हुये कहते है कि तुम आसमान में प्रकट हो जाओं और वारिष से विगड़ गये सारे मार्गों को सुखा दो।

बोड़ो मूल भाषा से-

आज्लं बिज्लं
जोंनि नआ गब्लं
दाहासै अखा दाससै
सान्दुङा हनै फौनोसै।
ऐ सान्दुं! ऐ सान्दुं!
अखा हादों द्राम-द्राम
अखा थांब्ला जागोन स्रां
थाबायनो मोनगोन ग्रान ग्रान। [9]

हिन्दी में अनुदित रुप-

अस्त-व्यस्त
झोपड़ी हमारी विपदग्रस्त
मत बरसो और वर्षा।
देखों उगता सुरज अभी दूर
स्वागत है तुम्हारा हे सूर्य प्रकट हो
वर्षा हुई परिपुर्ण
नम्र गो अनार्द्र
सूख जाये सारे मार्ग। [10]

प्राकृतिक रुप से देखा जाये तो बड़ो जनजाति बहुत ही सरल प्रकृति के होते है। अपनी अनुभूतियों को सहज रुप में प्रकट करने में विश्वास रखते है न कि कृतिम रुप में।

यदि इस जनजाति की कृषक जीवन की बात करे तो साधारणतः ये लोग कृषि को ही अपना मुख्य पेशा मानते है। कृषि इस जनजाति का प्रमुख अंग है। स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर खेतों में काम करना पसन्द करते है तथा अपने परिवार का पालन-पोषण कृषि के द्वारा ही करते है। अर्थात् यूँ कहे कि उनके जीवन शैली में सम्पूर्ण रुप से विद्यामान है खेती-बाड़ी करना इनका पैशा तथा अपने जीवन का एक प्रमुख साधन भी है। प्रकृति के प्रति इनके लगाव को सहज रुप से देखने को मिलता है। वे अपने खेतों में सभी प्रकार के फसलों को भी बोते है। कृषि से सम्बन्धित एक मधुर गीत इस प्रकार हैं-

बोड़ो मूल भाषा से-

हिन्जाव हौवा बयबो
खौसे जानानै हालाव थुनि
हादानखौ सिफायथारनांगौ
आय' माइब्रा जोसा गलाय मेन्देर
गासिबो गायजोव थारनांगौ
आय' गासिबों गायजोव थारनांगौ। [11]

हिन्दी में अनुदित रुप-

दोनो स्त्री और पुरुष
चलो हल चलाने एक साथ
नवभाग को जोत कर
करो माइब्रा जोसा के मिश्रित बीजवपन
बोओ सभी फसल
हा! बोओ सभी फसल [12]

इसमें यह परिलक्षित होता है कि स्त्री और पुरुष एक साथ मिलकर खेतों में काम करते है तथा परिवार के लिए अन्न इकट्ठा करते है। बोड़ो लोकगीत में प्रकृति और पुरुष के सरल रुप देखने को भी मिलता हैं।

बोड़ो लोकगीत में बालगीत के अन्तर्गत भी प्रकृति का चित्रण देखने को मिलता है। हर माता-पिता अपने बच्चों का दिल बहलाने के लिए चंदा में मामा का रुप

आरोपित करते है। क्योंकि मामा चंदा मामा की भाँति ही दूर रहते है। बोड़ो लोकगीत में इसका एक सुन्दर उदाहरण मिलता हैः

बोड़ो मूल भाषा से-

ऐ दु दु फै फै
ऐ दु दु फै
नों फैयाबोला थालिर थाइसे हर,
थालिर थाइसे हराब्ला थारिर थाइनै हर
ऐ दु दु फै फै। [13]

हिन्दी में अनुदित रुप-

ओ चंदा मामा! नीचे आओं
नीचे आओ, हमारे पास
नहीं तो भेजो एक केला
या दो
ओ चंदा मामा,
ओओ नीचे हमारे पास।। [14]

उपसंहार

उपर्युक्त विशलेषण के आधार पर यह कहाँ जा सकता है कि बोड़ो जनजाति के जीवन में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे बसने वाले ये लोग भी आज आधुनिकता के दौर में आधुनिक हो चले हैं लेकिन इनके लोकगीतों के अध्ययन से यह ज्ञात हो जाता है कि ये लोग साधारणतः प्रकृति को अपने जीवन का अभिन्न अंग मानते है। इनके लोकगीतो में प्रकृति के विविध अंग-उपांगो का सहज रुप से वर्णन मिलता है। विभिन्न पर्वो में प्रकृति का सम्बन्ध इनके जीवन में देखने को मिलता है।

पाद टिप्पणी

1. Bhattacharya BN. History of Indian Erotic- Literature, P. 10.
2. Dr. Anil Boro. Folk Literature of Bodos, P.67.
3. उश्रिसार बसुमतारी, संकलन कर्ता, डॉ. रमेश भारद्वाज, सम्पादक एवं अनुवादक, बोड़ो लोक गीत, प्रकाशकः गाधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 9.
4. वहीं, पृष्ठ संख्या- 10.
5. वहीं, पृष्ठ संख्या- 65.
6. वहीं, पृष्ठ संख्या- 66.
7. वहीं, पृष्ठ संख्या- 67.
8. वहीं, पृष्ठ संख्या- 68.
9. वहीं, पृष्ठ संख्या- 11.
10. वहीं, पृष्ठ संख्या- 11.
11. वहीं, पृष्ठ संख्या- 69.
12. वहीं, पृष्ठ संख्या- 69.
13. वहीं, पृष्ठ संख्या- 239.
14. वहीं, पृष्ठ संख्या- 239.

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. बसुमतारी, उश्रिसार, संकलन कर्ता, भारद्वाज, डॉ. रमेश, सम्पादक एवं अनुवादक, बोड़ो लोक गीत, (संस्करण-) प्रकाशकः गाधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, नई दिल्ली- ।
2. सक्सेना, उषा, लेखक, लोक साहित्य एवं संस्कृति, (संस्करण-),प्रकाशक- राज्य भाषा प्रकाशन, दिल्ली-।
3. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, लेखक, लोक साहित्य की भूमिका, (संस्करण-), प्रकाशक- साहित्य भवन प्रा. लि. इलाहाबाद-।
4. Brahma, Pramod Chandra, (Complited by), BODO-ENGLISH-HINDI DICTIONARY, (Fist Edition- 1996), Publisher- Onsumoi Libary and Bodo Sahitya Sabha, Kokrajahr- 70, Asam.
5. Boro, Dr. Anil, Writer, Folk Literature of Bodos, (First Edition – 2001), Publisher- N.L Publication, A.R.B Road, Panbazar, Guwahati – 01, Assam.